Chap-1.

प्रथम अध्याय

प्रसाद काव्य का मूल स्रोत

प्रथम अध्याय

भ्रमरगीत काव्य के मूल स्रोत

भारतीय सांस्कृतिक जीवन में पुराणों का महत्त्व अक्षुण्ण है। जब बौद्ध एवं जैन धर्म के प्रचण्ड प्रभंजन ने वेदोपनिषद् धर्मरूपी वटवृक्ष को झकझोर दिया था तब पुराणों ने पीयूष वर्षा द्वारा उसे पुन: पल्लवित-पुष्पित किया। भारतीय संस्कृति पुराणरूपी परिधान को धारण कर गौरवान्वित हो उठी। नूतन एवं पुरातन आचारों का सुन्दर समन्वयात्मक स्वरूप प्रस्तुत करने का श्रेय पुराणों को है। पुराण वर्णित पावन चरित्र हमारे मन प्राणों में अद्यावधि रमे हुए हैं। पुराणोत्तर संस्कृत-प्राकृत भाषाओं के काव्य में पुराणरूपी भागीरथी भारत की आधुनिक हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला प्रभृति भारतीय भाषाओं के मध्ययुगीन काव्यांचल के कूलों को आप्लावित करती हुई अग्रसर होती है। अत: पुराणों के गहन चिन्तन एवं मनन के अभाव में मध्यकालीन भक्ति-काव्य सागर में गोते लगाने पर भी मणि-माणिक्य एवं मौक्तिकों की प्राप्ति दुस्साध्य-सी है। पुराण साहित्य चिन्तामणि के समान है जिसके आलोक में हिन्दी एवं गुजराती मध्य युगीन भक्ति-काव्य परखा जा सकता है।

पुराणों की संख्या के बारे में मतैक्य नहीं है। प्रमुख पुराणों की संख्या अष्टादश है।[१] पुराणों ने युगानुरूप वैदिक धर्म की वह सरस सरिता बहाई जिसमें सर्व साधारण को स्नान करने का स्वर्णिम अवसर प्राप्त हुआ। लोकरुचि की भिन्नता को ध्यान में रखते हुए पुराणों में पंच-देवोपासना का प्रतिपादन किया गया है। प्रकृति के प्रत्येक रूप में एक देवता की कल्पना करते रहने के कारण बहु-देववाद को प्रश्रय मिलने लगा। इस पर भी कुछ प्रमुख देवताओं जैसे ब्रह्मा, विष्णु और शिव की उपासना पर अधिक बल दिया गया है। आज भी पुराण-वर्णित आख्यान और चरित्र ही साधारण भारतीय जनता के आदर्श हैं। पुराण वर्णित ईश्वर के अवतार आज भी उपास्य देव के रूप में वंदनीय एवं वरेण्य समझे जाते हैं।[२] ब्रह्मा, विष्णु और शिव जैसे प्रमुख देवताओं को केन्द्र में रखकर पुराणों का परंपरानुगत

१- मद्वयं भद्वयं चैव ब्रभयं वचतुष्टयम् ।
अनापद्लिंग-क-स्कानि पुराणानि पृथक् पृथक् ।।
(पुराण विमर्श पृष्ठ ७५ लेखक बलदेव उपाध्याय सन् १९६५ चौखम्बा पु.)

२- पुराण विभाजन :
अष्टादश पुराणेषु दशभिर्गायते शिव :
चतुर्भिर्भगवान् ब्रह्मा द्वाभ्यां देवी तथा हरि : ।(स्कंद पु. केदार खण्ड १)

वर्गीकरण भी प्राप्त होता है। इस वर्गीकरण के अनुसार विष्णु की भक्ति के सम्बन्ध में विष्णु, नारदीय, भागवत, गरुड़, पद्म और वराह पुराणों का उल्लेख है। ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन और ब्रह्म इन छः पुराणों का सम्बन्ध ब्रह्मा जी की भक्ति के साथ है। इसके अतिरिक्त मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कंद और अग्निपुराण का शिव की भक्ति के साथ सम्बन्ध निर्दिष्ट है। पुराणों का यह विभाजन, ब्रह्मा, विष्णु और शिव के सम्बंध में पुराणों की संख्या समान है-यह सिद्ध करने का प्रयत्न मात्र है। अधिक व्यापकता के साथ विचार करने पर अवश्य प्रतीत होता है कि अठारह पुराणों में से लगभग आधे पुराणों का सम्बन्ध वैष्णव धर्म और कृष्ण भक्ति से सिद्ध होता है।

हिन्दी एवं गुजराती कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों के पथ-प्रदर्शन का श्रेय पुराणों को है। ब्रज-भाषा में कृष्ण-भक्ति शाखा के महाकवि सूरदास और गुजराती भाषा में कृष्ण-भक्ति काव्य के प्रणेता आदि कवि नरसिंह पर अधिकांश में श्रीमद् भागवत और अन्य वैष्णव पुराणों का प्रभाव अमिट रूप से पड़ा है। अतः कृष्ण-भक्ति काव्य की पृष्ठभूमि के रूप में पुराण वर्णित कृष्ण-कथा का परिचय आवश्यक है। विष्णु पुराण श्रीमद् - भागवत पुराण का आधार स्तंभ है। इसी पुराण का विस्तार भागवत के बारह-स्कंधों में है। विष्णु पुराण के ३८ अध्यायों में साहित्यिक सौन्दर्य युक्त सरस, रमणीय और सुन्दर भाषा में कृष्ण-वृत्तवर्णित है। अद्वैत भावनायुक्त होने पर भी इसमें भक्ति मार्ग का वर्णन मिलता है। भक्ति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है -`अविवेकी जनों को विषय - वासना में जैसी प्रीति होती है उसी प्रकार ईश्वर के स्मरण से प्रभु के प्रति जो अचल प्रीति का प्रादुर्भाव होता है उसका नाम भक्ति है।[१] रास वर्णन के अंत में श्री कृष्ण के लिए लिखा है -` वह परमेश्वर गोपियों में एवं प्राणी मात्र में आकाशादि की तरह सर्वत्र व्याप्त है।[२] ब्रह्मवैवर्त पुराण में भी परब्रह्म या परमात्मा के रूप में श्री कृष्ण का प्रतिपादन हुआ है। `कृष्ण जन्म खंड` में श्री कृष्ण के विभिन्न अवतार एवं उनकी लीलाओं का वर्णन है। प्रकृति, ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवादि का आविर्भाव श्रीकृष्ण से बताया है।[३] प्रस्तुत पुराण में श्रीकृष्ण के साथ राधा का भी उल्लेख है। राधा का वर्णन इतने विस्तृत रूप में पहली

१- विष्णु पुराण, ६।२०।२७

२- वही, ५।१३।६०-६१

३- आविर्बभूवुः प्रकृति ब्रह्म विष्णु शिवादयः।
(ब्र० वै० चतुर्थ खण्ड)

बार इसी पुराण में उपलब्ध होता है। इसमें वृन्दावन का वर्णन भी विस्तृत परिमाण में मिलता है। `पद्म पुराण` के पाताल खंड एवं उत्तरखंड में श्री कृष्ण चरित्र का वर्णन मिलता है। `ब्रह्म पुराण` में वर्णित कृष्ण-कथा संक्षिप्त होने पर भी मूलकथा भागवत के समान ही है। उप पुराणों के अन्तर्गत `हरिवंश पुराण` में श्रीकृष्ण की कथा का वर्णन है। इसमें भगवान की लीलाओं का शृंखलाबद्ध वर्णन है। विष्णु पर्व के २६ वें अध्याय में अक्रूर के व्रजागमन का और श्रीकृष्ण को मथुरा ले जाने का उल्लेख मिलता है। २८वें अध्याय में श्रीकृष्ण बलराम का मथुरा प्रवेश एवं कुब्जा-उद्धार का वर्णन मिलता है।

श्री गर्गाचार्य प्रणीत `गर्ग संहिता` में श्रीकृष्ण के चरणामृत की पावन वर्षा हुई है। प्रस्तुत ग्रंथ उपालंभ युक्त प्रणय-प्रधान काव्य है। सम्पूर्ण `गर्ग संहिता` दश खण्डों में विभक्त है। इस संहिता में कतिपय कृष्ण लीलाओं का वर्णन श्रीमद् भागवत के दशम् स्कंध में वर्णित लीलाओं की अपेक्षा अधिक सुन्दर और ग्राह्य बन पड़ा है। इसमें श्री राधा का विरहिणी के रूप में जो वर्णन मिलता है वह अन्यत्र दुर्लभ है। भ्रमरगीत काव्य-परम्परा के विस्तृत अध्ययन के लिए प्रस्तुत संहिता का मथुरा खंड विशेष रूप से द्रष्टव्य है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि व्रजांगनाओं की प्रेम-भक्ति से प्रभावित ज्ञानी उद्धव के आग्रह पर स्वयं श्रीकृष्ण उद्धव सहित गोकुल में आते हैं और विरह संतप्ता राधा और गोपियों को अपनी मधुर वाणी से तृप्त करते हैं।[१]

प्रत्येक देश के साहित्य में प्रतिभा संपन्न मनीषियों की देन के रूप में कतिपय ऐसे मर्मस्पर्शी काव्य हुआ करते हैं, जो परवर्ती कवियों के प्रमुख प्रेरणा स्रोत सिद्ध होते हैं। कृष्ण-भक्ति के अनेक प्रसंगों का आधार श्रीमद् भागवत पुराण है। इसमें भगवान् के चौबीस

१- श्री नारद उवाच -

इत्थं निशम्य भक्तस्य वचनं भक्तवत्सल : ।
स्मृत्वा वाक्यं स्वकथितं गंतुंच केच्युतो मतिम् ।।१ ।।
(-गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड ५ अध्याय ११)
संध्यायां राधयादूत: श्रीकृष्णो भगवान् स्वयम् ।
एकान्ते शीतलं शश्वज्जगाय कदलीवनम् ।।२ ।।
(- गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड ५ अध्याय २०)

अवतारों का वर्णन मिलता है। इस बृहदाकार पुराण के आधे से अधिक भाग में कृष्णावतार की कथा का वर्णन है। सभी वैष्णवाचार्यों ने प्रस्थानत्रयी के समान भागवत को महत्व दिया है। वैष्णव धर्म का एक भी सम्प्रदाय ऐसा नहीं जो भागवत से प्रभावित न हो। आज जो विशाल भारत के कोने-कोने में कृष्ण-भक्ति का स्रोत प्रवहमान है उसका प्रमुख श्रेय इसी पुराण को है। 'भागवत पुराण' ने अन्य किसी पुराण की अपेक्षा भारतीय समाज के सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं धार्मिक जीवन पर गहरा प्रभाव अंकित किया है। श्रीकृष्ण भक्ति सम्प्रदाय का जो अंकुर मथुरा वृन्दावन के हरित कुंजों में पनपा और जिसकी विभिन्न शाखाओं ने सम्पूर्ण भारत को आच्छादित किया उसका आधार स्तंभ 'श्रीमद्-भागवत' ही है। प्रस्तुत पुराण की कथा द्वादश स्कंधों में विभक्त है। भ्रमरगीत काव्य का सम्बंध श्रीमद् भागवत पुराण के दशम् स्कंध से है; अतः यहां हम दशम् स्कन्ध की चर्चा करना ही समीचीन समझते हैं।

श्रीमद् भागवत के दशम् स्कंध में विचार एवं भाव की उभय तटवाहिनी तरंगिणी पद-पद पर अपनी काव्य ध्वनि से पाठक को तरंगायित कर देती है। जो लोग धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से इसका पान करने के लिए तत्पर हों उन्हें भी तन्मय कर देने की सहज क्षमता प्रस्तुत स्कंध के विभिन्न अध्यायों में है। महर्षि वेदव्यास द्वारा मंगलाचरण में कथित 'पिबत भागवतम् रसमालयम्' की उक्ति वस्तुतः सार्थक है।[1] द्वादश स्कंध युक्त महाकाव्य भागवत का दशम् स्कंध उसके हृदय के समान है। इस हृदय रत्नाकर में अनेक काव्य रत्न अपनी आभा बिखेरे हुए हैं। हिन्दी एवं गुजराती के अधिकांश कवि-कोविदों ने भागवत् के इस हृदय रत्नाकर में निमज्जित होकर एक जौहरी के समान अमूल्य रत्नों को परखा है। 'वेणु गीत'[2] 'गोपिका गीत'[3] 'युगलगीत'[4] 'वियोग गीत'[5] 'भ्रमर गीत'[6] और 'महिषी गीत'[7] इस हृदय रत्नाकर के ऐसे अमूल्य रत्न हैं जिनके प्रकाश का प्रतिबिम्ब हिन्दी एवं गुजराती काव्य सुधा स्यंदिनी में द्रष्टव्य हैं। भागवत के ये सभी गीत भागवतकार के असाधारण

१- भागवत् - ६।१।३

२ - भागवत दशम स्कंध (पूर्वार्ध) अध्याय २९

३- वही, ,, ३६

४- वही, ,, ३५

५- वही, ,, ३६

६- वही, अध्याय ४७ श्लोक १२ से २१ तक

७- वही, अध्याय ६० श्लोक १५ से २३

संगीत ज्ञान के परिचायक हैं। वेणु एवं युगल गीत में सारंग राग का प्रयोग संगीत की सूक्ष्मता का बोधक है। ये गीत भावों के स्रोत हैं जिनके श्रवण मात्र से श्रोता आत्म विभोर हो जाता है। श्रीमद् भागवत रस प्लावित है। 'रसो वैस :। रस ह्येवं लब्ध्वा आनन्दी भवति'। वह आत्मा रसरूप है। रसरूप उसके साक्षात्कार से आत्मानंद होता है। भागवत के ये गीत कवि के हृदय से प्रस्फुटित झरने हैं। जो अपनी दिव्य ध्वनि से पाठक को तन्मय बना देते हैं।

श्रीमद् भागवत की भव्य भाव-राशि में गीतात्मक अंश सबसे अधिक मर्मस्पर्शी और हृदय द्रावक है। दशम स्कंध (पूर्वार्ध) के पांचों गीत गोपियों के हृदय की पुकार हैं जो अपने गीत नाम को सार्थक करते हैं। गीत का सम्बन्ध शत-प्रतिशत हृदय से होता है। जब अंत:करण अपनी वेदना और अनुभूति को अपने अंदर संवरण नहीं कर पाता तब जो सहज उद्गार हृदय से निकलते हैं उनका नाम गीत है। इन गीतों में गोपियों का प्रेम रूपायित है। उनके हृदयस्थ भावों का अनिर्वचनीय स्रोत इन गीतों में उमड़ उठा है। प्रेम और विरह के ये गीत अत्यंत प्रभावोत्पादक हैं। अब हम यहां उन गीतों की पृथक्-पृथक् चर्चा करना चाहेंगे जिनका 'भ्रमरगीत' की मूल चेतना से अन्तर्सम्बन्ध है।

वेणुगीत :

श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का प्रमुख पहलू उनका सौन्दर्य और माधुर्यमण्डित मोहक रूप है। ललित मधुर, गोपाल के सौन्दर्य में एक मोहिनी शक्ति वर्तमान है। इसी रूप माधुरी की मोहक शक्ति ने गोपियों के मन मन्दिर को प्रकाशित कर दिया था। उनके अन्तस् के कोने-कोने में नटवर का दिव्य स्वरूप समा गया था। वे उसके सौन्दर्य को निरन्तर निरखने पर भी नहीं अघाती थीं। 'वेणुगीत' में मिलन की आकांक्षाओं को जगाने वाली वंशी ध्वनि के प्रभाव का वर्णन है। गीत के द्वारा गोपियों को आकर्षित करने का उल्लेख विष्णु पुराण में भी प्राप्त है।[1] पूर्णेन्दु के समान सुन्दर मुख से वंशी-वादन के स्वर को सुनकर गोपियां अपने तन, मन, प्राणों की सुध खो बैठती हैं। वे आपस में एक दूसरे से प्रियतम कृष्ण के रूप, गुण और वंशी ध्वनि के प्रभाव का वर्णन करती रहती हैं। वंशीधर की मनोमुग्धकारी मुरली के माधुर्य ने उन्हें आत्मविस्मृत कर दिया है।

१- ब्रह्मपुराण अध्याय, ११८
विष्णु पुराण पंचमांश, अध्याय १३

प्रियतम के प्रेम के प्रवाह में निमग्न गोपियों के मन में एक के पश्चात् एक चित्र उभरते हैं।[1] वृन्दावन की हरी-भरी प्रकृति के बीच वंशीवादन के व्यापक प्रभाव का अंकन बड़ी सूक्ष्मता के साथ किया गया है। समग्र जड़ और चेतन पदार्थ मुरली-माधुर्य के साम्राज्य में झूमने लगते हैं। जब कमनीय कृष्ण अपने मुखारविन्द से मुरली की मधुर तान छेड़ देते हैं तब सब पशु पक्षी मंत्र-मुग्ध रह जाते हैं।[2] मोहन की मुख माधुरी और चंचल चितवन के प्रभाव की गोपियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। पेड़, पर्वत, सरिताएं, बादल, नक्षत्र--- आदि अचेतन पदार्थ भी मुरली के अद्भुत प्रभाव से मंत्र-मुग्ध रह जाते हैं। वेणु का सौभाग्य देखकर उसके प्रति गोपियों के मन में सहज असूयाभाव का आविर्भाव होता है। कृष्ण की बांसुरी को लेकर उपालंभ के रूप में सूर, नरसिंह, मीरा आदि ने स्वतंत्र-रूप से काव्य-रचना की है। हिन्दी एवं गुजराती में मुरली माधुरी को लेकर विपुल साहित्य रचा गया है।

वियोग गीत :

कंस का निमन्त्रण पाकर अक्रूर के साथ श्रीकृष्ण के मथुरा गमन प्रसंग को लेकर भ्रमरगीत काव्य के भव्य भवन का शिलारोपण होता है। मथुरागमन प्रसंग ही गोपियों के वियोग का मूल कारण है। अत: कतिपय कवियों ने 'भ्रमरगीत' काव्य-रचना का प्रारंभ इस प्रसंग से किया है। इस प्रसंग का पर्याप्त विस्तार विभिन्न कवियों ने अपनी भावना के अनुकूल किया है। भागवत के इन कथा सूत्रों के आधार पर 'भ्रमरगीत' काव्य की अच्छी खासी ऊंची इमारत खड़ी की गई है। श्रीकृष्ण का मथुरागमन प्रसंग अत्यंत हृदयस्पर्शी है। जब गोपियों ने सुना कि हमारे मन मोहन श्रीकृष्ण और बलराम को ले जाने के लिए अक्रूर व्रज में आये हैं, तब इस अप्रिय संवाद से उनके हृदय में अपूर्व व्यथा हुई।[3] वे अपना हृदय अपना समूचा जीवन उन्हें समर्पित कर चुकी थीं। अत: विरह की आशंका से व्याकुल हो गईं। उनकी आंखों से आंसुओं की अविरल धारा बह रही थी।

१- बर्हापीडम् नटवरवपु: कर्णयो : कर्णिकारं
बिभ्रद् वास: कनक कपिशं वैजयन्तीं च मालाम्।
रन्ध्रान् वेणोरधर सुधया पुरयन् गोपवृन्दै -
वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद् गीतकीर्ति : । -भागवत(पूर्वार्ध) १०।२१।५

२- भागवत दशम् स्कंध(पूर्वार्ध) २१-१३

३- भागवत दशम् स्कन्ध (पूर्वार्ध) ३१।१४

~~उनकी आंखों से~~
वे एक साथ मिलकर विलाप करने लगीं । वे वियोग की असह्य व्यथा को लेकर विधाता को कोसती हैं ।[1] भवितव्य वियोग को लेकर गोपियों का हृदय शोकातुर हो रहा है । नगर की नारियां अपने प्रियतम को मोहपाश में बांध लेंगीं ऐसा आभास उन्हें मिल जाता है ।[2] अक्रूर के प्रति भी भोली गोपियों का रोष द्रष्टव्य है । वे अक्रूर नाम लेकर अत्यंत मार्मिक व्यंग्य करती हैं ।[3] भ्रमरगीत काव्य में जो उपालंभों का प्राधान्य है भागवतकार के इन्हीं भावों से अनुप्राणित है । गोपियों को अपने श्यामसुन्दर की निर्दयता पर आक्रोश होता है । वियोग की कल्पना मात्र से उनका हृदय कांप उठता है । वे अपने प्राण प्यारे का रथ रोकने का निर्णय करती है । आंखों से आंसुओं की धारा के साथ गोपियों के मुख से हृदय को द्रवित कर देनेवाले भावों का `वियोग गीत` के अंतिम दो श्लोकों में अंकन हुआ है ।[4] वे अत्यंत व्याकुल होकर उच्च स्वर में `हे गोविन्द । हे दामोदर । हे माधव । पुकार उठीं ।[5] प्रियतम का नाम पुकार-पुकार कर रात भर रोती रहीं । प्रातःकाल अक्रूर के साथ जब कृष्ण रथ पर सवार हुए तब गोपियां उनके मधुर वचन, सन्देश सुनने की प्रतीक्षा में खड़ी रहीं । श्रीकृष्ण के दूत द्वारा `मैं आऊंगा` प्रेम सन्देश भेजकर उन्हें धैर्य बंधाया ।[6] गोपियां प्रियतम के रथ की दिशा में शून्य भाव से देखती रहीं । भागवतकार ने गोपियों की व्यथा का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है ।

श्री कृष्ण के मथुरागमन के प्रसंग को लेकर `गोविन्द-गमन` नामक स्वतंत्र काव्य-रचना नरसिंह मेहता ने की है । हिन्दी एवं गुजराती के भ्रमर गीतकारों ने इस प्रसंग का विस्तार गोपियों का विभिन्न युक्ति-प्रयुक्तियों द्वारा रथ को रोकना, राधा द्वारा कील को निकालना आदि नवीन उद्भावनाओं के द्वारा किया है । भ्रमर गीत काव्य-परम्परा में इस हृदयस्पर्शी प्रसंग को यदि हम रूपक में बांधना चाहें तो कह सकते हैं कि कंस के आदेश पर अक्रूर का कृष्ण को बुलाने के लिए गोकुल आना उस झंझावात

१- भागवत दशम् स्कन्ध(पूर्वार्ध) ७५०५४ ३९।१९

२- वही, ७६०५६ ३९।१४

३- वही, ७६०५४ ३९।१६

४- वही, ३९।२९-३०

५- वही, ३९।३१

६- तास्तथा तप्यतीर्वीक्ष्य स्वप्रस्थाने मद्भटन्नम ।
सान्त्वयामास सप्रेमैराथास्य इति रीत्यक ।।। भा. दशमस्कंध(पूर्वार्ध)अध्याय ३९।३५

के समान सिद्ध होता है जो गोपियों के अंत:करण के अंबुधि में तूफान मचाकर सब-कुछ अस्त-व्यस्त कर देता है। संपूर्ण गोकुल कर्तव्यशून्य होकर प्रेम के महानद में डूबता उतराता रहता है।

भ्रमरगीत :

प्रिय के पास दूत भेजकर संदेश भेजने की प्रथा अत्यंत प्राचीन है। रामायण में श्री राम का वियोगिनी सीता को हनुमान के द्वारा संदेश भेजना सर्वविदित है। प्राचीन काव्य में मेघ, हंस आदि को दूत बनाकर संदेश भेजने के प्रमाण भी उपलब्ध हैं। श्रीमद्-भागवत के दशम् स्कंध(पूर्वार्ध) के ४६ और ४७ वें अध्यायों में मथुरा स्थित श्रीकृष्ण द्वारा उद्धव को दूत बनाकर ब्रज भेजना, नंद यशोदा से उनकी भेंट, कृष्ण का संदेश, भ्रमर के प्रति उपालंभ, गोपी-उद्धव-संवाद, उद्धव का मथुरा लौटकर ब्रज दशा का वर्णन करना आदि प्रसंगों का सुन्दर निरूपण हुआ है। दशम् स्कंध के कतिपय अनुवादकों को छोड़कर सूर तथा उनके परवर्ती सभी भ्रमरगीत कारों ने इन कथासूत्रों में न्यूनाधिक परिवर्तन किये हैं। उदाहरणार्थ भागवत के कृष्ण उद्धव को अपने संदेश द्वारा नंद-यशोदा को प्रसन्न करने तथा गोपियों का विरह जन्य दु:ख दूर करने के उद्देश्य से भेजते हैं। उसमें द्वैत-अद्वैत, साकार-निराकार सगुण-निर्गुण जैसे विवादों को प्रश्रय नहीं दिया। सूरदास के कृष्ण उद्धव को गोपियों को ज्ञान सिखाने के लिए नहीं, परन्तु स्वयं उनका ज्ञान-गर्व नष्ट करने के लिए ब्रज भेजते हैं। अत: इस प्रसंग का मूल स्वरूप जानने के लिए भ्रमरगीत काव्य के उत्स-श्रीमद्-भागवत का अध्ययन आवश्यक है।

श्रीकृष्ण ब्रजभूमि से जब मथुरा गये तब 'मैं आऊंगा'[१] शब्दों के द्वारा शोकातुर गोपियों को सान्त्वना प्रदान करके गये थे। गोपियां प्रियतम के आगमन की प्रतीक्षा में मिलन की मधुर स्मृतियों को लेकर समय यापन कर रही थीं। श्रीकृष्ण कंस-वध के पश्चात् मथुरा में राज-कार्य की व्यस्तता को लेकर स्वयं नहीं आ पाते, किन्तु अपने सखा उद्धव को दूत बनाकर अपना संदेश भेजते हैं।[२] उद्धव जी श्रीकृष्ण का मौखिक संदेश

१- आयास्य इति दौत्यकै : । वही ३६।३५

२- गच्छोद्धव व्रजं सौम्य पितोर्नौ प्रीतिमावह ।
गोपीनां मद्विभोगार्थं मत्सन्देशैर्विमोचय ।।
(भागवत १०।४६।३)

लेकर सूर्यास्त के समय गोकुल आते हैं और नंद यशोदा को सांत्वना प्रदान करते हैं।[1] परवर्ती भ्रमरगीतकारों में जो बिरह वात्सल्य का व्यापक चित्रण है वह बीजरूप में भागवतकार के नंद उद्धव-संवाद में मिलता है। भाव-विह्वल नंद यशोदा को उद्धव जी श्रीकृष्ण के परब्रह्म स्वरूप का परिचय कराते हुए उनकी सर्वव्यापकता विभिन्न उदाहरणों द्वारा समझाते हैं - "आप दोनों पुत्र वियोग का शोक न करें क्योंकि वे काष्ठ की अग्नि के समान सब जीवों में व्याप्त हैं।[2] हिन्दी एवं गुजराती के भ्रमरगीतकारों ने जो सगुण-निर्गुण का विवाद उपस्थित किया है, वैसा विवाद भागवत में नहीं मिलता।

दूसरे दिन ब्राह्म मुहूर्त में नंद के द्वार पर रथ देखकर गोपियों का कुतूहल बढ़ जाता है। उस समय नित्य-कर्म से निवृत्त होकर उद्धव जी आ पहुंचते हैं। उन्हें श्रीकृष्ण का दूत मानकर गोपियां उनके इर्द-गिर्द एकत्र हो जाती हैं और उनसे कहती है- "उद्धव जी। हम जानती हैं कि आप (व्रजनाथ के नहीं) यदुनाथ के पार्षद हैं।[3] सूर आदि परवर्ती भ्रमरगीतकारों ने इस उपालंभ प्रधान व्यंग्यात्मक शैली का अनुसरण किया है। गोपियां अपने हृदय में स्थित असंतोष को स्वार्थपूर्ण प्रेम की भर्त्सना के द्वारा व्यक्त करती हैं। "दूसरों के साथ जो प्रेम सम्बन्ध का स्वांग किया जाता है, वह तो किसी न किसी स्वार्थ के लिए ही होता है। भौंरों का पुष्पों से और पुरुषों का स्त्रियों से ऐसा ही स्वार्थपूर्ण प्रेम सम्बन्ध होता है।[4] गोपियां विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से मानव के स्वार्थी स्वभाव की आलोचना करती हैं - "धन न रहने पर वेश्या अपने कामुक को अंगुष्ठ दिखा देती है। अध्ययन समाप्त होने पर कितने शिष्य अपने आचार्यों की सेवा करते हैं? वृक्ष पर फल नहीं रहते तो पक्षी भी उड़ जाते हैं। वन में आग लगी कि पशु भाग खड़े हुए। स्त्री के हृदय में कितनी ही आसक्ति हो व्यभिचारी पुरुष मतलब निकल जाने पर उलट कर भी नहीं देखता।[5] संसार के प्रेम-सम्बन्ध स्वार्थवश होते हैं।

१- भागवत १०।४६।१९,२०,२७,२८

२- वही, १०।४६।३६

३- जानीमस्त्वां यदुपते : पार्षदं समुपागतम्।
(भागवत १०।४७।४)

४- अन्योन्यार्थकृता मैत्री यावदर्थं विडम्बनम्।
पुम्भिः स्त्रीषु कृता यद्वत् सुमनस्सिव षाटपदैः ।।
(भागवत १०।४७।६

५- भागवत, १०।४७।५,६,७,८

भ्रमरगीत काव्य में वर्णित उपालंभों में इसी स्वार्थी स्वभाव का विस्तार परवर्ती कवियों में मिलता है।

भ्रमरगीत नामकरण का आधार :

गोपी-उद्धव संवाद के अंतर्गत भागवतकार ने गुनगुनाते हुए एक भ्रमर के आगमन का उल्लेख किया है -"श्रीकृष्ण मिलन की लीला में ध्यानस्थ एक गोपी की दृष्टि गुनगुनाते हुए एक भौंरे पर पड़ती है। उसने ऐसा समझा कि मुझे रूठी हुई समझकर श्रीकृष्ण ने इसे अपना दूत बनाकर भेजा है।[१] इसके पश्चात् 'गोप्युवाच' द्वारा ४७वें अध्याय के १२ से २१ तक के श्लोकों में एक गोपी द्वारा भ्रमर को उपालंभ देने का जो उपक्रम है, उसी का नाम 'भ्रमर गीत' है। इसी उपालंभ पूर्ण भावात्मक गीत ने न केवल व्रजभाषा के कवियों को ही वरन् गुजराती के भी अनेक कवियों को उपालंभयुक्त विरह काव्य की रसगंगा बहाने के लिए अदम्य प्रेरणा प्रदान की है। निश्चय ही भागवत का यह भ्रमर गीत प्रसंग मार्मिक एवं काव्यक्षम है। यह प्रसंग एक प्रकार से भ्रमर-गीत काव्य का मूल स्रोत है। 'भागवत के 'भ्रमरगीत में गोपी हृदय की मनोदशा का चित्रण विभिन्न उपालंभों के माध्यम से हुआ है। गोपी ने भ्रमर को प्रतीक मानकर चित्रजल्प के रूप में अपने हृदय का आक्रोश व्यक्त किया है। चित्रजल्प के दस भेद हैं - प्रजल्प, परिजल्प, विजल्प, उज्जल्प, संजल्प, अवजल्प, अभिजल्प, आजल्प,[२] प्रतिजल्प, सुजल्प। इन दसों के क्रमशः उदाहरण भागवत के भ्रमरगीत में मिलते हैं।

प्रजल्प :

'कपटी के सखा भ्रमर। सपत्नी के कुचों से मसली हुई माला के कुंकुम में सजी हुई अपनी मूंछों से मेरे चरणों का स्पर्श न कर।"

परिजल्प :

"भ्रमर। तेरे स्वामी ने केवल एक बार अपनी मोहिनी अधर सुधा का पान कराया

१- काचिन्मधुकरं दृष्ट्वा ध्यायन्ती कृष्णसंगमम्।
प्रिय प्रस्थापितं दूतं कल्पमित्वेदमब्रवीत्॥ भागवत १०।४७।११

२- कृष्ण चरितामृत विशेषांक : पृष्ठ ४८, १९६४ ई०
कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर।

और फिर निर्दय होकर यहां से चले गये, जैसे तू पुष्पों का रस लेकर उड़ जाता है।"

विजल्प :

"रे मिलिन्द। यदुकुल शिरोमणि का गुणगान यहां क्यों कर रहा है-? जा उड़ जा, मधुपुरी की सुन्दरियों के सामने किया कर, वे अभी उन्हें नहीं जानतीं।"

उज्जल्प :

"हे भृंग! तू मुझे क्यों भुलाने आया है कि श्रीकृष्ण मेरे लिए व्याकुल हैं? बावले! स्वर्ग में पाताल में पृथ्वी पर ऐसी कौन है, जो उन पर मोहित होकर न्योछावर न हो जाय; लक्ष्मी भी उनकी उपासना करती है फिर मुझ जैसी को क्यों चाहेंगे?"

संजल्प :

"रे मधुकर! मेरे चरणों को अपने सिर पर क्यों रख रहा है? हटा दे, ऐसा अनुनय-विनय मैं बहुत देख चुकी हूं; जिनके लिए सब कुछ छोड़ा वे छोड़ कर चले जाय। अब उन पर क्या विश्वास करें?"

अपजल्प :

"रे भौंरे! आज से नहीं, मैं उन्हें बहुत पहले से जानती हूं, उनकी निष्ठुरता का परिचय मुझे है। रामरूप में छिपकर बालि का वध किया; कामसंतप्ता शूर्पणखा का रूप नष्ट कर दिया; दानवेन्द्र बलि से छल किया। मुझे किसी भी काली वस्तु से प्रयोजन नहीं।----- पर उनकी चर्चा तो मैं नहीं छोड़ सकूंगी।

अभिजल्प :

"रे मधुप! देख, जो एक बार भी उनके लीला पीयूष का कण भी पी लेता है, उसके सारे द्वन्द्व मिट जाते हैं, बहुत से तो अपना घर-बार स्वाहा कर बाहर चले जाते हैं, भिक्षा से पेट भरते हैं, पर लीला श्रवण नहीं छोड़ पाते।"

आजल्प :

"रे अलि! हरिणी व्याध के सुमधुर गान- पर विश्वास कर अपना प्राण खो देती है, हम सब भी उनकी मधुभरी बातों में भूल गयीं, आज उसी का परिणाम भोग रही हैं। उनकी बात जाने दे, कुछ दूसरी बात कह।"

प्रतिजल्प :

"मधुकर ! मेरे प्रियतम के प्यारे सखा ! क्या मेरे प्राणनाथ ने तुम्हें यहां भेजा है ? तब तो मेरे पूज्य हो । तुम्हें कुछ चाहिए क्या ? जो चाहो सो मांग लो । मैं वही दे दूंगी । प्यारे भ्रमर ! क्या मुझे वहां ले चलोगे ?"

सुजल्प :

"प्यारे भ्रमर ! आर्यपुत्र श्रीकृष्ण मधुपुरी में सुख से तो हैं न ? क्या वे हम दासियों की कभी चर्चा भी करते हैं ? ओह ! वह दिन कब आयेगा, जब वे दिव्य सुगंधपूर्ण अपना हस्तकमल हमारे सिर पर रखेंगे ?[१]

भागवत के इसी भ्रमरगीत का आधार ग्रहण कर समय-समय पर युगानुरूप 'भ्रमरगीत' की अमर सृष्टि हिन्दी एवं गुजराती भाषाओं में होती रही है । भ्रमर का प्रतीक उपालंभ के लिए चुनकर भागवतकार ने अपनी उर्वर कल्पनाशक्ति का परिचय दिया है । भागवत के इस 'भ्रमरगीत' की भावाभिव्यंजना मर्मस्पर्शिणी और संगीतमय है । गोपी ने मधुकर को लक्ष्य कर प्रेम भरे उपालंभों से कृष्ण के कपटपूर्ण प्रेम, निष्ठुरता, क्रूरता, अकृतज्ञता, चंचलचित्त एवं विरक्ति आदि की सोदाहरण आलोचना की है । कृष्ण और भ्रमर के स्वरूप व गुण धर्म सादृश्य के कारण गोपियों की दबी हुई खीझ अत्यंत स्वाभाविक रूप से व्यक्त हुई है । भ्रमर और कृष्ण दोनों श्यामवर्ण के हैं । दोनों के स्वर (वंशीनाद और भ्रमर का गुंजन) मोहक और मादक हैं । दोनों पीत वस्त्र धारी (कृष्ण का पीताम्बर तथा भ्रमर की पीत रेखा) है । इस बहिरंग साम्य के अतिरिक्त दोनों के अंतरंग स्वभावजनित साम्य की ओर भी संकेत है । दोनों सद्य: विकसित सुमनों का रस लेकर चलते बनते हैं । इसके अतिरिक्त भ्रमर को 'कितव बन्धु' अर्थात् 'धूर्त के सखा' कहकर उन प्रस्तुत व्यंगय द्वारा कृष्ण के अतिरिक्त उद्धव को भी अप्रत्यक्ष रूप से अपना लक्ष्य बनाया है । इस प्रकार मात्र दश श्लोकयुक्त श्रीमद् भागवत के भ्रमरगीत में भ्रमरगीत काव्य सृष्टि के अधिकांश तत्व सूक्ष्मतया विद्यमान हैं । संक्षिप्त होने पर भी अपनी मर्मस्पर्शिता एवं सरसता को लेकर भ्रमरगीत का यह प्रसंग गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं

१- भागवत दशम् स्कंध (पूर्वार्ध) ४७।१२ से २१

में अनेक कवियों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। भ्रमरगीत रचयिताओं ने भागवत स्थित बीजरूप इसी भ्रमरगीत के आधार पर भ्रमरगीत काव्य का वह वटवृक्ष तैयार किया है जो बहुशाखा युक्त होने पर भी बीजरूप में एक है।

उपालंभ काव्य :

भागवत के गीतात्मक अंश में उपालंभ काव्य के अन्यतम उदाहरण हैं। उपालंभ काव्य में मानवहृदय की मार्मिक अभिव्यक्ति होती है। इसका आधार गहरी आत्मीयता और अनन्य प्रेम होता है। प्रेमी अपने प्रेम-पात्र से अलग होकर बिकल और विह्वल हो जाता है। उसकी मिलनोत्कंठा तीव्र से तीव्रतम होकर उसे अत्यधिक व्यग्र बना देती है। ऐसी स्थिति में प्रेमी का किसी उपयुक्त प्रतीक के माध्यम द्वारा अपने प्रिय-पात्र को उपालंभ देना अत्यंत स्वाभाविक है। भावावेग प्रतीक का आश्रय पाकर विविध रूपों में प्रवाहित होता है। उसमें प्रिय के संयोग समय का प्रेम व्यापार निष्ठुरता के रूप में चित्रित किया जाता है। उपालंभ काव्य में मिलनोत्कंठा भावाभिव्यंजना में प्राण - रूपिणी शक्ति होती है। भागवत के उपालंभ प्रधान गीतों का प्रवाह जयदेव के `गीत-गोविन्द` और मैथिल कोकिल विद्यापति की पदावली के माध्यम से अपने सूक्ष्म रूप में प्रवाहित होता हुआ सूर-सागर में आकर अत्यंत व्यापक रूप में लहराने लगा। `भ्रमरगीत` अपने मूल रूप में उपालंभ काव्य है। उपालंभों का प्राचुर्य हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं के भ्रमरगीत काव्य में समान रूप से मिलता है।

अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भागवत के गोपीगीतों में जो उपालंभयुक्त विरह-वर्णन मिलता है उसका प्रभाव हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं की समृद्ध भ्रमरगीत-काव्य-परम्परा में परिलक्षित होता है। भ्रमरगीत काव्य के भाव एवं प्रसंग विस्तार को हृदयंगम करने में भागवत के गोपी गीतों का अध्ययन भ्रमरगीत काव्य की पृष्ठभूमि के रूप में निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है।

दार्शनिक पक्ष :

हिन्दी एवं गुजराती भ्रमरगीत काव्य परम्परा के दो पक्ष हैं - १-भावात्मक पक्ष, २- दार्शनिक पक्ष। दार्शनिक पक्ष के दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए श्रीमद्-भागवत स्थित `भ्रमरगीत` के पूर्व प्रसंग उद्धव व्रजागमन और गोपी उद्धव संवाद का मर्म

समझना आवश्यक है। हिन्दी एवं गुजराती भ्रमरगीत काव्य-परम्परा में यह दार्शनिक पक्ष निर्गुण -सगुण के विवादरूप में समान भाव से मिलता है। उपालंभ युक्त विरहानुभूति की गतिमयी अभिव्यक्ति के पश्चात् भ्रमरगीत काव्य का यदि कोई प्रमुख उल्लेखनीय पहलू है तो यह सरस, मार्मिक तथा काव्यमयी पद्धति द्वारा सगुण का मण्डन और निर्गुण का खण्डन। कृष्ण (ईश्वर) के साकार और निराकार रूप की चर्चा द्वारा भ्रमरगीत काव्य में भक्ति और योग का समावेश हुआ है। यों तो सम्पूर्ण भ्रमरगीत काव्य पर भागवत के दशम् स्कंध स्थित भावों की व्यापक छाया है। किन्तु विभिन्न कवियों ने अपनी प्रतिभा के रंग में रंगकर इस प्रसंग को न्यूनाधिक मौलिकता प्रदान की है। अत: उन कवियों द्वारा किये गये इन न्यूनाधिक परिवर्तन एवं परिवर्धन के प्रसंगों को भली-भांति आत्मसात करने के लिए भागवत स्थित गोपी-उद्धव-संवाद के अन्यान्य प्रसंगों का निरीक्षण -परीक्षण करना न्यायसंगत होगा।

भागवत के कृष्ण राजनैतिक कारणों से एक बार मथुरा जाने के पश्चात् व्रज नहीं आ पाते। उधर उनके विरह में व्याकुल व्रजांगनाओं की दयनीय दशा थी। वियोग दावानल से उनका हृदय व दग्ध हो रहा था। मथुरा स्थित कृष्ण गोपियों की इस वेदना का सहज ही अनुभव करते हैं। उनके मन प्राणों में कम पीड़ा नहीं है। अपनी विवशता को लेकर वे स्वयं नहीं आ सकते अत: उन्होंने अपने प्रिय सखा उद्धव को व्रज भेजने का विचार किया। भागवत के ४६वें अध्याय में कृष्ण द्वारा उद्धव को अपना दूत बनाकर भेजने का प्रसंग इस प्रकार है -" उद्धव जी वृष्णिवंशियों में एक प्रधान पुरुष थे। वे साक्षात् बृहस्पति जी के शिष्य और परम बुद्धिमान थे। वे श्रीकृष्ण के प्यारे सखा एवं मंत्री भी थे। एक दिन भगवान श्रीकृष्ण ने अपने प्रियभक्त और एकान्त प्रेमी उद्धव जी का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा- सौम्य स्वभाव उद्धव। तुम व्रज में जाओ। वहां मेरे माता-पिता हैं उन्हें आनंदित करो और गोपियां मेरे विरह की व्याधि से बहुत ही दु:खी हो रही हैं, उन्हें मेरा सन्देश सुनाकर वेदना से मुक्त करो। प्यारे उद्धव! गोपियों का मन नित्य निरन्तर मुझ में ही लगा रहता है। उनके प्राण, उनका जीवन, उनका सर्वस्व मैं ही हूं। मेरे लिए उन्होंने अपने पति-पुत्र आदि सभी सगे सम्बंधियों को छोड़ दिया है। उन्होंने बुद्धि से भी मुझे अपना प्यारा प्रियतम नहीं अपनी आत्मा मान रखा है। मेरा यह व्रत है कि जो लोग मेरे लिए लौकिक एवं पारलौकिक धर्म को

छोड़ देते हैं, उनकी देखभाल मैं स्वयं करता हूं। प्रिय उद्धव। मैं उन गोपियों का परम प्रियतम हूं। मेरे यहां चले आने से वे मुझे दूरस्थ मानती हैं और मेरा स्मरण करके अत्यंत मोहित हो रही हैं, बार-बार मूर्च्छित हो जाती हैं। वे विरह की व्यथा से विह्वल हो रही हैं, प्रतिक्षण मेरे लिए उत्कंठित रहती हैं। मेरी गोपियां बड़े ही कष्ट और मान से अपने प्राणों को किसी प्रकार रख रही हैं। मैंने उनसे कहा था कि "मैं आऊंगा।" यह वचन ही उनके जीवन का आधार है। मैं ही उनकी आत्मा हूं। वे नित्य निरन्तर मुझमें ही तन्मय रहती हैं।[१]

उपर्युक्त उल्लेख से स्पष्ट है कि भागवत के कृष्ण उद्धव को अपना संदेश देकर नंद-यशोदा को प्रसन्न करने और गोपियों के विरह जनित दु:ख को दूर करने के लिए भेजते हैं। हिन्दी एवं गुजराती के भ्रमरगीत काव्य रचयिताओं ने भागवतकार के प्रस्तुत उद्देश्य में परिवर्तन किया है। उदाहरणार्थ सूर और उनके परवर्ती कवियों ने कृष्ण द्वारा उद्धव को उनका ज्ञान-गर्व नष्ट करने के लिए व्रज भेजने का वर्णन किया है।[२] गुजराती भ्रमरगीत परम्परा में 'रसिक गीता' के रचयिता भीम ने सूर की प्रणाली पर उद्धव को व्रज भेजने का उद्देश्य सूर के समान भागवतकार से भिन्न बताया है -

"एक समय कृष्ण उद्धव रे, बेठा वातो करी ;
उद्धव मन आण्युं रे, अमो मोटा हरि।
एहवुं अभिमान ज्यारे रे, उद्धवे मन आणीद्र ;
हवे एहने गोकुल मोकलु रे, हरिये एम जाणीड।"[३]

गुजराती के भालण कवि ने मात्र यशोदा के दु:ख को दूर करने के उद्देश्य से उद्धव को व्रज भेजा है, जब कि नाकर, प्रेमानंद जैसे कवियों ने भागवत का ही पूर्ण अनुसरण किया है। अत: भागवतकार के और अन्य कवियों के भ्रमरगीतों में उद्धव को व्रज भेजने की उद्देश्य-भिन्नता का अध्ययन रोचक सिद्ध होता है।

भागवतकार के उद्धव सूर्यास्त के समय गोकुल आते हैं और उस दिन मात्र नंद यशोदा से उनकी मुलाकात एवं वार्तालाप का वर्णन है। परवर्ती कुछ भ्रमरगीतकारों ने

१- भागवत, १०।४६।१ से ६

२- सूरसागर, (ना.प्र.स.) पद ४०३६

३- बृ.का.दो.भा.७ पृ० ६४०

गोपियों द्वारा दूर से रथ देखने का वर्णन किया है जो उनकी अपनी उद्भावना है। भागवतकार ने दूसरे दिन प्रातःकाल गोपियों से भेंट का वर्णन किया है। अतः इस प्रसंग का मूलाधार भी अपने यथावत् रूप में देख लेना आवश्यक है -

"परम सुन्दर उद्धव जी सूर्यास्त के समय ब्रज में पहुंचे। उसी समय जंगल से लौटते हुए पशुओं के खुरों के आघात से इतनी धूल उड़ रही थी कि उनका रथ ढंक गया था।[१] तदनन्तर संध्याकालीन गोकुल स्थित वातावरण का और विभिन्न दृश्यों का मनोरम चित्रण हुआ है। उसके पश्चात् उद्धव जी नंदद्वार पर पहुंचते हैं। यहां यह स्पष्ट है कि भागवत में उनके आगमन के समय गोपियों का कोई उल्लेख नहीं है। नंद श्रीकृष्ण के मथुरागमन के पश्चात् के प्रसंगों का स्मरण करते हैं। कंस को मारकर राज्य स्थापित करने के कार्य को लेकर संतोष व्यक्त करते हैं। उनके हृदय में अतीत की अनेक स्मृतियां उमड़ आती हैं। कृष्ण की लीलाओं के गान द्वारा उनके हृदय में भावों की बाढ़-सी आ जाती है। उद्धव के साथ नंद के वार्तालाप के समय यशोदा भी उनके पास होती हैं। दोनों कृष्ण की अतीत की स्मृतियों में निमग्न हो जाते हैं। नंद और यशोदा के वात्सल्य पूर्ण हृदय का चित्रण भागवतकार के ही शब्दों में द्रष्टव्य है -"जब नंद कृष्ण की लीलाओं का एक-एक करके स्मरण करने लगे, तब उनके मन में प्रेम की बाढ़ आ गई, वे विह्वल हो गये और पुत्र से मिलने की अत्यंत उत्कंठा के कारण उनका गला भर गया। श्रीकृष्ण की एक एक लीला सुनकर यशोदा के नेत्रों से आंसू बहते जाते थे और पुत्र स्नेह की बाढ़ से उनके वक्षस्थल से दूध की धारा बहने लगी।" भागवतकार द्वारा चित्रित पितृ-हृदय एवं मातृ-हृदय का चित्रण हृदय स्पर्शी है। हिन्दी एवं गुजराती दोनों भाषाओं के परवर्ती भ्रमरगीतकारों ने नंद और विशेषतया यशोदा को अत्यंत लौकिक रूप प्रदान कर उनके वात्सल्य का स्वतंत्र रूप से चित्रण किया है। नंद और यशोदा के अगाध अनुराग का भाव-विस्तार दोनों भाषाओं के भ्रमरगीतों में निश्चय ही द्रष्टव्य है

नंद के स्नेह स्निग्ध भावों से युक्त विह्वल पितृ-हृदय को एवं पुत्र वात्सल्य से वशीभूत यशोदा के मातृ-हृदय को देखकर उद्धव जी प्रभावित होते हैं। उसके पश्चात् सान्त्वना प्रदान करते हुए जो उपदेश देते हैं उनमें श्रीकृष्ण के सर्वव्यापी ब्रह्मस्वरूप का

१- भागवत, १०।४६।८

ज्ञानपूर्ण वर्णन है -" हे महाभाग । आप दोनों खेद न करें । श्रीकृष्ण को आप शीघ्र ही अपने पास देख लेंगे । वे समस्त प्राणियों के हृदय में उसी तरह परिव्याप्त हैं जिस तरह कि काष्ठ में अग्नि व्याप्त रहती है । एक शरीर के प्रति अभिमान न होने के कारण न तो उनका कोई प्रिय है और न तो अप्रिय । वे सब में और सबके प्रति समान हैं । इसलिए उनकी दृष्टि में न तो कोई उत्तम है और न तो कोई अधम । यहां तक कि विषमता का भाव रखने वाला भी उनके लिए विषम नहीं है । उस परमेश्वर के न माता है न पिता है । न स्त्री है और न पुत्र आदि हैं । न इसका इस संसार में कोई अपना है और न पराया । और उसका न शरीर है और न जन्म ही होता है ।[१] सारांश यह कि नंद एवं यशोदा के साथ उद्धव के इस ज्ञानोपदेश में श्रीकृष्ण के परब्रह्मत्व का प्रतिपादन है । पुत्र भाव रखने वाले माता-पिता पर इसकी प्रतिक्रिया क्या होती है उसका चित्रण भागवतकार ने नहीं किया । सारी रात्रि वे नंद की जिज्ञासा और यशोदा का दु:ख शांत करने के लिए उपदेश देते रहे इसका वर्णन है । जब कि गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं में इसका प्रतिक्रियापूर्ण वर्णन अत्यन्त बिस्तार के साथ मिलता है । हिन्दी एवं गुजराती कवियों ने नंद एवं यशोदा के मुख से उद्धव की ज्ञानपूर्ण बातों का खण्डन कराया है और उनके लौकिक लीला विहारी रूप को प्रतिपादित किया है । भागवत के अनुसार उद्धव के व्रज में आने का प्रयोजन उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो गया है । अब हम यहां उद्धव गोपी संवाद का क्या आशय है उस पर भी विचार करेंगे ।

`भ्रमर` को लक्ष्य कर गोपी ने अपने जो उद्गार प्रकट किए थे उन्हें सुनकर उद्धव जी प्रभावित हुए । गोपियों की प्रेम भक्ति देखकर वे उनकी सराहना करते हैं । भागवत के गोपी-उद्धव संवाद में हृदय एवं बुद्धि का समानान्तर प्रभाव लक्षित होता है । गोपियों की भक्ति से प्रभावित होकर उद्धव जी कहते हैं -" हे गोपियो । तुम कृतकृत्य हो, तुम्हारा जीवन सफल है, तुम सारे संसार के लिए पूजनीय हो क्योंकि तुम सबने इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण को अपना हृदय अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया है । भगवान श्रीकृष्ण के वियोग से तुमने उन इन्द्रियातीत परमात्मा के प्रति वह भाव प्राप्त कर लिया है जो सभी वस्तुओं के रूप में उनका दर्शन कराता है । तुम लोगों का वह भाव मेरे सामने भी प्रकट हुआ यह मेरे प्रति तुम्हारा अनुग्रह है ।[२] उद्धव जी गोपियों के भाग्य की सराहना करने के

१- भागवत, १०।४६।३६ से ३८

२- भागवत, १०।४६।२३ से २६

पश्चात् उन्हें ब्रह्म विषयक सन्देश सुनाते हैं । यह बड़ा ही मनोवैज्ञानिक एवं चातुर्यपूर्ण ढंग है ।

प्रेमलक्षणा भक्ति समन्वित गोपियों को ब्रह्म की व्यापकता, उसका गुणातीत होना, इन्द्रियों से अतीत होना, आत्मा, माया आदि बातें समझाने के पूर्व उद्धव जी ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है -" मैं अपने स्वामी का गुप्त काम करने वाला दूत हूं । आपके प्रियतम भगवान श्रीकृष्ण ने आप लोगों को परम सुख देने के लिए यह प्रिय सन्देश भेजा है । वही लेकर मैं आप लोगों के पास आया हूं "[१] इस प्रकार श्रीकृष्ण द्वारा प्रेषित संदेश उद्धव गोपियों को देते हैं -" मैं सबका उपादान कारण होने से सबका आत्मा हूं, सबमें अनुगत हूं, इसलिए मुझसे कभी भी तुम्हारा वियोग नहीं हो सकता । जैसे संसार के सभी भौतिक पदार्थों में आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी- ये पांचों भूत व्याप्त हैं, इन्हीं से सब वस्तुएं बनी हैं और यही उन वस्तुओं के रूप में है । वैसे ही मैं मन, प्राण, पंचभूत इन्द्रिय और उनके विषयों का आश्रय हूं । वे मुझमें हैं, मैं उनमें हूं और जब पूछो तो मैं ही उनके रूप में प्रकट हो रहा हूं । मैं ही अपनी माया के द्वारा भूत, यन्द्रिय, और उनके विषयों के रूप में होकर उनका आश्रय बन जाता हूं, तथा स्वयं निमित्त भी बनकर अपने आपको ही रचता हूं, पालता हूं और समेट लेता हूं । आत्मा माया और उसके कार्यों से पृथक् है । वह विशुद्ध ज्ञान स्वरूप, जड़ प्रकृति, अनेक जीव तथा अपने ही अवान्तर भेदों से रहित सर्वथा शुद्ध है। कोई भी गुण उसका स्पर्श नहीं कर पाते । माया की तीन वृत्तियां हैं - सुषुप्ति, स्वप्न और जाग्रत । इनके द्वारा वही अखण्ड, अनन्त बोधस्वरूप आत्मा कभी तेजस् और कभी विश्वरूप से प्रतीत होता है । मनुष्य को चाहिए कि वह समझे कि स्वप्न में दीखनेवाले पदार्थों के समान ही जाग्रत अवस्था में इन्द्रियों के विषय भी प्रतीत हो रहे हैं ; वे मिथ्या हैं । इसीलिए उन विषयों का चिन्तन करने वाले मन और इन्द्रियों को रोक ले और मानो सोकर उठा हो, इस प्रकार जगत् के स्वाप्निक विषयों को त्यागकर मेरा साक्षात्कार करे । जिस प्रकार सभी नदियां घूम-फिरकर समुद्र में ही पहुंचती हैं, उसी प्रकार मनस्वी पुरुषों का वेदाभ्यास, योगसाधन, आत्मनात्मविवेक त्याग, तपस्या, इन्द्रिय संयम और सत्य आदि समस्त धर्म, मेरी प्राप्ति में ही समाप्त

१- भागवत, १०।४७।२८

होते हैं। सबका सच्चा फल है मेरा साक्षात्कार ; क्योंकि वे सब मन को निरुद्ध करके मेरे पास पहुंचाते हैं। गोपियो ! इसमें सन्देह नहीं कि मैं तुम्हारे नयनों का ध्रुवतारा हूं। तुम्हारा जीवन सर्वस्व हूं। किन्तु मैं जो तुमसे इतना दूर रहता हूं, उसका कारण दूर रहने पर भी मन से तुम मेरे सान्निध्य का अनुभव करो, अपना मन मेरे पास रखो क्योंकि स्त्रियों और अन्यान्य प्रेमियों का चित्त अपने परदेशी प्रियतम में जितना निश्चल भाव से लगा रहता है, उतना आंखों के सामने पास रहने वाले प्रियतम में नहीं लगता। अशेष वृत्तियों से रहित संपूर्ण मन मुझमें लगाकर जब तुम लोग मेरा अनुस्मरण करोगी, तब शीघ्र ही सदा के लिए मुझे प्राप्त हो जाओगी।[१] गोपियों के मन पर इस ज्ञानोपदेश की प्रतिक्रिया स्वरूप कोई प्रतिवाद भागवत में नहीं मिलता। भागवतकार ने स्पष्ट शब्दों में यह लिखा है कि उद्धव के मुख से अपने प्रियतम का यह सन्देश सुनकर गोपियों को बड़ा आनन्द हुआ। उद्धव के ज्ञानोपदेश से वे सगुण-निर्गुण, भक्ति-ज्ञान, साकार-निराकार के वाद-विवाद में नहीं पड़तीं। उन्हें श्रीकृष्ण की लीलाओं की स्मृति हो आती है। वे प्रेमानुरक्त होकर उद्धव जी के सामने अपने प्रियतम की प्रशंसा करती रहती हैं और मथुरा स्थित कृष्ण की कल्याण कामना करती हैं। उनके प्रियतम उन्हें याद करते रहें यही उनके लिए संतोष की बात है। एक बात ध्यान देने योग्य है कि भागवत की गोपियां भी अपने स्त्री स्वभाव के अनुसार नागरी नारियों के प्रति अपना व्यंग्य परोक्ष रूप से व्यक्त करना नहीं भूलतीं। कुब्जा आदि मथुरा स्थित नारियों पर परवर्ती भ्रमरगीत काव्य में जो व्यंग्य किये गये हैं उनका मूलाधार श्रीमद् भागवत में उपलब्ध होता है। ग्राम बालाएं जितनी सरल होती हैं उतनी नागरिकाएं नहीं। भागवतकार ने इस ओर भी संकेत किया है। अत्यधिक स्नेह के कारण भी सन्देह होना स्वाभाविक है। राज पाकर कृष्ण बड़े आदमी बन गए हैं, अनेक नरपतियों की कुमारियों से विवाह करेंगे आदि सभी नारी सुलभ दुर्बलताओं से प्रेरित होकर गोपियां कहती हैं " उद्धव जी। एक बात आप हमें बतलाइए। जिस प्रकार हम अपनी प्रेमभरी लजीली मुस्कान और उन्मुक्त चितवन से उनकी पूजा करती थीं और वे भी हमसे प्यार करते थे उसी प्रकार मथुरा की स्त्रियों से भी वे प्रेम करते हैं या नहीं ? तथा अरी सखी ! अब तो उन्होंने शत्रुओं को मारकर राज्य पा लिया है, जिसको देखो वही उनका सुहृद बना फिरता है। अब वे बड़े-बड़े नरपतियों की कुमारियों के साथ विवाह करेंगे - उनके साथ आनन्दपूर्वक रहेंगे, यहां हम गंवारियों के पास क्यों आयेंगे।"[२] इस प्रकार कतिपय उपालंभों को

१- भागवत, १०।४७।४०-४५
२- वही, १०।४७।५८ से ६२

छोड़कर गोपियों ने उद्धव के उपदेश का कोई सीधा प्रतिकार नहीं किया । प्रत्युत् उन्होंने बड़े प्रेम और आदर से उद्धव जी का सत्कार किया है । उद्धव जी गोपियों की विरह-व्यथा मिटाने के लिए कई महीनों तक वहीं रहे । वे भगवान् श्रीकृष्ण की अनेक-लीलाएं और बातें सुना-सुनाकर व्रजवासियों को आनंदित करते रहे । गोपियों की प्रेम- भक्ति का जो प्रभाव उद्धव जी पर पड़ा उसका गान मथुरा जाने के पूर्व उन्होंने किया है जो उद्धव-गीत के नाम से प्रसिद्ध है -" इस पृथ्वी पर केवल इन गोपियों का ही शरीर धारण करना श्रेष्ठ एवं सफल है क्योंकि ये सर्वात्मा भगवान् श्रीकृष्ण के परम प्रेममय दिव्य महाभाव में स्थित हो गई है । प्रेम की यह ऊंची से ऊंची स्थिति संसार के भय से भीत मुमुक्षजनों के लिए ही नहीं अपितु बड़े-बड़े मुनियों, मुक्त पुरुषों तथा भक्तजनों के लिए अभिलाषनीय ही है । हमें इसकी प्राप्ति नहीं हो सकी । सत्य है, जिन्हें भगवान श्रीकृष्ण की लीलाकथा के रस का चसका लग गया है, उन्हें कुलीनता को द्विजाति समुचित संस्कार की और बड़े-बड़े यज्ञ-यागों में दीक्षित होने की क्या आवश्यकता है ? अथवा यदि भगवान की कथा का रस नहीं मिला, उसमें रुचि नहीं हुई तो अनेक कल्पों तक बार-बार ब्रह्मा होने से भी क्या लाभ ? कहां वनचरी, आचार,ज्ञान और गति से हीन गांव की गंवार ग्वालिनें और कहां सच्चिदानंद घन भगवान श्रीकृष्ण में यह अनन्य परम प्रेम । अहो धन्य है । इससे यह सिद्ध होता है कि यदि कोई भगवान के स्वरूप और रहस्य को न जानकर भी उनसे प्रेम करे, उनका भजन करे, तो वे स्वयं अपनी शक्ति से, अपनी कृपा से उसका परम कल्याण कर देते हैं, ठीक वैसे ही, जैसे कोई अनजान में भी अमृत पी ले तो वह अपनी शक्ति से ही पीनेवाले को अमर बना देता है । भगवान् श्रीकृष्ण ने रासोत्सव के समय इन व्रजांगनाओं के गले में बांह डाल-डालकर इनके मनोरथ पूर्ण किये । इन्हें भगवान ने जिस कृपा प्रसाद का वितरण किया, इन्हें जैसा प्रेमदान किया, वैसा भगवान की परम प्रेमवती नित्यसंगिनी वक्ष:स्थल पर विराजमान लक्ष्मी जी को भी नहीं प्राप्त हुआ । कमल की सी सुगन्ध और कान्ति से युक्त देवांगनाओं को भी नहीं मिला । फिर दूसरी स्त्रियों की तो बात ही क्या करें ? मेरे लिए तो सबसे अच्छी बात यही होगी कि मैं इस वृन्दावन धाम में कोई झाड़ी,लता अथवा औषधि जड़ी-बूटी ही बन जाऊं । आह यदि मैं ऐसा बन जाऊंगा, तो मुझे इन व्रजांगनाओं की चरण-धूलि निरन्तर सेवन करने के लिए मिलती रहेगी । इनकी चरण रज में स्नान

करके मैं धन्य हो जाऊंगा । धन्य हैं ये गोपियां । देखो तो सही, जिनको छोड़ना अत्यंत कठिन है, उन स्वजन सम्बन्धियों तथा लोक वेद की आर्य मर्यादा का परित्याग करके उन्होंने भगवान की पदवी उनके साथ तन्मयता, उनका परम प्रेम प्राप्त कर लिया है । औरों की तो बात ही क्या- भगवद्वाणी, उनकी नि:श्वासरूप समस्त श्रुतियां, उपनिषद् भी अब तक भगवान् के परम प्रेममय स्वरूप को ढूंढते ही रहते हैं, प्राप्त नहीं कर पाते । स्वयं भगवती लक्ष्मी जी जिनकी पूजा करती रहती हैं, ब्रह्मा शंकर आदि परम समर्थ देवता, पूर्णकाम आत्माराम और बड़े-बड़े योगेश्वर अपने हृदय में जिनका चिन्तन करते रहते हैं, भगवान श्रीकृष्ण के उन्हीं चरणारविन्दों को रासलीला के समय गोपियों ने अपने वक्ष:स्थल पर रखा और उनका आलिंगन करके अपने हृदय की जलन-विरह व्यथा शान्त की । नन्द बाबा के व्रज में रहने वाली गोपांगनाओं की चरण धूल को मैं बार-बार प्रणाम करता हूं । अहा इन गोपियों ने हरि की लीलाओं का जो गान किया है, वह तीनों लोकों को पवित्र करता रहेगा ।[१]

कई मास व्रज में बिताने के पश्चात् मथुरा जाने के लिए उद्धव जी ने नंद-यशोदा और गोपियों की अनुमति प्राप्त की । इन सबने भेंट की सामग्री प्रदान कर आंखों में आंसू भरकर उद्धव जी के रथ को बड़े प्रेम से विदा किया । उद्धव जी की विदा के समय के जो दो श्लोक भागवत में हैं वे गोपियों की भक्ति के परिचायक हैं - उद्धव जी । अब हम यही चाहते हैं कि हमारे मन की एक एक वृत्ति, एक-एक संकल्प श्रीकृष्ण के चरण कमलों के ही आश्रित रहे । हमारी वाणी नित्य-निरन्तर उन्हीं के नामों का उच्चारण करती रहे और शरीर उन्हीं को प्रणाम करने, उन्हीं की आज्ञा पालन और सेवा में लगे रहे । उद्धव जी । हम सच कहते हैं, हमें मोक्ष की इच्छा बिलकुल नहीं है । हम भगवान की इच्छा से अपने कर्मों के अनुसार चाहे जिस योनि में- जहां शुभ आचरण करें, दान करें और उसके फलस्वरूप श्रीकृष्ण में हमारी प्रीति उत्तरोत्तर बढ़ती रहे ।[२]

गोपियों की इस भक्ति से अभिभूत उद्धव जी ने मथुरा पहुंचकर श्रीकृष्ण को प्रणाम किया और उन्हें व्रजवासियों की प्रेममयी भक्ति का उद्रेक जैसा उन्होंने देखा था

१- भागवत, १०।४७।५८ से ६२

२- भागवत, १०।४७।६६-६७

वह सुनाया और भेंट की सामग्री भी श्रीकृष्ण, वसुदेव, बलराम और राजा उग्रसेन को दे दी । भागवत में गोपियों की आलोचना-प्रत्यालोचना का अभाव ध्यान देने योग्य है ।

इस प्रकार उद्धव के व्रजागमन से लेकर मथुरा तक लौटने की कथा भागवत के ४६वें एवं ४७वें अध्यायों में वर्णित है । उपर्युक्त प्रमुख प्रसंगों का ज्ञान भ्रमरगीत काव्य के सर्वांगीण अध्ययन के लिए अनिवार्य है । इस प्रसंग की आद्योपांत चर्चा के पश्चात् अब हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भागवत में जो संदेश उद्धव ने व्रजवासियों को दिया है उसको लेकर प्रतिवाद नहीं होता । उद्धव जी ने अपने ज्ञानोपदेश के उपरान्त गोपियों की भक्ति की जो मुक्त हृदय से प्रशंसा की है उसमें कृत्रिमता या बनावटीपन नहीं । प्रेम भक्ति से वे प्रभावित हुए हैं - उन्हें यह प्रेम भक्ति पसन्द आई है । ज्ञानमार्ग के उपासक के लिए प्रेमभक्ति को पसन्द करना भी एक प्रकार से भक्ति की विजय है । शायद उद्धव जी के मुख से निःसृत मुक्त हृदय की इस प्रशंसा में सूर जैसे सूक्ष्म द्रष्टा कवि को अपनी अन्तः प्रवेशिनी शक्ति द्वारा ज्ञान पर भक्ति की विजय सिद्ध करने के सूक्ष्म सूत्र मिले हों ।

अधिकांश भ्रमरगीतकारों ने भ्रमरगीत काव्य की रचना में भागवत के विभिन्न प्रसंगों का मात्र आधार ग्रहण कर मुक्तक या प्रबन्ध रूप में स्वतंत्र भ्रमरगीत काव्य की रचना की है । भाव एवं प्रसंग विस्तार के क्षेत्र में हिन्दी एवं गुजराती भाषा द्वय के कवियों ने जो परिवर्तन किये हैं उनके अध्ययन में उपर्युक्त विवेचन सहायक सिद्ध होगा । संपूर्ण भ्रमरगीत काव्य को निम्नलिखित प्रसंगों में विभक्त किया जा सकता है -

१- कंस के निमंत्रण पर अक्रूर के साथ कृष्ण का मथुरागमन ।
२- प्रिय-प्रवास के समय गोपियों का विलाप करना ।
३- कृष्ण द्वारा नंद, यशोदा, गोप एवं गोपियों को सान्त्वना देने के उद्देश्य से उद्धव को व्रज भेजना ।
४- उद्धव का सूर्यास्त के समय व्रजागमन ।
५- नंद एवं यशोदा से वार्तालाप ।
६- नंद का पुत्र-प्रेम ।
७- यशोदा का मातृ-हृदय-वात्सल्य ।
८- उद्धव द्वारा कृष्ण के ब्रह्म स्वरूप का दोनों को उपदेश ।

९- दूसरे दिन प्रात:काल में उद्धव का गोपियों द्वारा स्वागत ।

१०- स्वार्थयुक्त प्रेम की गोपियों द्वारा भर्त्सना ।

११- कृष्ण का दूत मानकर मधुप के प्रति उपालंभ ।

१२- गोपी-उद्धव संवाद और उद्धव का ज्ञानोपदेश ।

१३- गोपियों द्वारा कृष्ण लीला का गान ।

१४- गोपियों की प्रेम भक्ति से प्रभावित उद्धव द्वारा उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा ।

१५- उद्धव का कुछ मास रहने के पश्चात् उपहार के साथ मथुरागमन ।

१६- कृष्ण से भेंट और व्रज दशा वर्णन ।

इस प्रकार भागवत में भ्रमरगीत काव्य की जो रूपरेखा मिलती है उसमें विभिन्न कवियों ने अपनी भावनाओं के रंग भरकर उसे किस प्रकार एक स्वतंत्र काव्य के रूप में तैयार किया है, यह अध्ययन का एक रसप्रद विषय है । प्रत्येक कवि ने कुछ त्याज्य और कुछ ग्रहणीय समझा है, वहां अपनी ओर से कुछ न कुछ मिलाया है । इन विभिन्न कवि रूपी हंसों द्वारा जिस नीर-क्षीर विवेक के दर्शन होते हैं, यह कहां तक काव्य सौन्दर्य के अनुरूप बन सका है, यह जानने की उत्सुकता भ्रमरगीत के अध्येता में अवश्य रहती है । अत: इस दृष्टि से पुराण साहित्य एवं स्वतंत्र रूप से भागवत पुराण का अध्ययन पाठक के मन की अनेकानेक जिज्ञासाओं के समाधान में सहायक सिद्ध होता है । भाषा द्वय के प्रमुख प्रतिनिधि कवि सूर और नरसिंह के पश्चात् भी अनेक कवियों ने इस प्रसंग विशेष को अपनी-अपनी शैली में प्रस्तुत किया है । भागवत पुराण में राधा का स्पष्ट उल्लेख नहीं है । जब कि हिन्दी एवं गुजराती के भ्रमरगीत काव्य में राधा का चरित्र द्रष्टव्य है । पुराणवर्णित भ्रमरगीत में और हिन्दी एवं गुजराती कवियों द्वारा आलेखित एवं० प्रसंग एवं विषय निरूपण में पर्याप्त अंतर है ।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हिंदी तथा गुजराती भ्रमरगीत काव्य का आदिस्रोत पुराण साहित्य है और उसमें भी श्रीमद् भागवत पुराण का दशमस्कंध तो भ्रमरगीत काव्य का मूल उत्स ही है । वहां से जो धारा प्रवाहित हुई वह हिन्दी तथा गुजराती काव्य साहित्य को समानरूप से अभिसिंचित करती रही । परिणामस्वरूप दोनों साहित्यों में भ्रमरगीत काव्य नवसैचेतना तथा नवीन कल्पना लेकर उद्भूत हुआ । अगले अध्याय में हम इसका विवेचन करेंगे तथा भ्रमरगीत काव्य की दोनों भाषाओं के साहित्य में विकसित परंपरा का आकलन करेंगे ।